लेख

महिला स्वास्थ्य, औषधियां तथा नीति-चुनौतियां

मीरा शिवा

जन स्वास्थ्य के क्षेत्र में, व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य देखरेख से जुड़ा *अल्मा अटा चार्टर 1978* एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। इसने इस बात पर रोशनी डाली कि स्वास्थ्य की स्थिति तय करने में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक पहलू अहम होते हैं। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि अब तक स्वास्थ्य देखरेख के प्रति सीधी खड़ी और कटौतीपूर्ण सोच अपनाई गई है जो अस्वस्थता के असली कारणों की अनदेखी करती है। उदाहरण के लिए सुरक्षित पानी, पर्याप्त पोषण, रोज़गार, आश्रय आदि का अभाव अस्वस्थता के कारण हो सकते हैं। *अल्मा अटा* के रचियता, डब्ल्यू.एच.ओ. के प्रमुख निदेशक डॉ. हैफ़डन माहलर ने स्वास्थ्य देखरेख में बढ़ते औषधिकरण को 'नव उपनिवेशवाद' का नाम दिया है।

नए उदारवादी बाज़ार की अगुवाई में, औद्योगिक कम्पनियों से प्रभावित, असमानता बढ़ाने वाली नीतियों के आने से औरतों, बच्चों और बूढ़ों, विशेष रूप से जो आर्थिक-सामाजिक रूप से अभावग्रस्त हैं, की परिस्थितियां और मुश्किल हो गई हैं। एक ओर क्रयशक्ति का अभाव तथा दूसरी ओर खाद्य पदार्थों, बुनियादी ज़रूरती सामानों और स्वास्थ्य देखरेख की आसमान को छूती कीमतें। इन हालातों में अस्वस्थता के असली कारणों की अनदेखी करने तथा उनके योगदान व श्रम को अहमियत न देने से स्थितियां और बिगड़ गई हैं।

हमें औषधियों तथा स्त्रियों के स्वास्थ्य के मुद्दे को ऊपर दी गई सच्चाइयों के संदर्भ में देखना होगा। बड़ी संख्या में औरतों में ख़ून की कमी है। घरेलू काम, रोज़गार और बच्चे जनने का दोहरा, तिहरा बोझ उठा रही औरतों में से 36.5% का बी.एम.आई. (बॉडी मास इंडैक्स) 18.5 से भी कम है जिसका मतलब है, लगातार भूखे रहना। स्पष्ट है कि उनमें कमज़ोरी, थकान, सांस फूलना जैसी कुपोषण से होने वाली स्वास्थ्य समस्याएं तो होंगी ही। इनके अतिरिक्त गर्भावस्था और प्रसव के समय की जटिलताएं अधिक गंभीर समस्या हैं। प्रसव के दौरान या बाद में भारी रक्तस्राव से अनेक औरतें अपनी जान गंवा देती हैं। प्रसव पश्चात के रक्तस्राव से निपटने के लिए तो ज़ाहिर है ऑक्सीटॉसिक जैसी अत्यावश्यक औषधियों की ज़रूरत होती है। चूंकि 20% मातृत्व मृत्यु का संबंध ख़ून की कमी से होता है, उसकी रोकथाम के लिए न सिर्फ़ उचित चिकित्सा की ज़रूरत है बल्कि उतनी ही अहमियत पहले किए जाने वाले रोकथाम के उपायों को बेहतर करने की भी है। औरतों को पर्याप्त ऊर्जा, प्रोटीन, लौह तत्व, कैल्शियम, विटामिन सी/ए जैसे प्राकृतिक सूक्ष्म पोषण से भरपूर आहार की ज़रूरत है जो सस्ता और विविधतापूर्ण हो।

भारी रक्तस्राव से निपटने के लिए आपात स्थिति में रक्त की आसानी से उपलब्धता, रक्तदाताओं की मौजूदगी, रक्त बैंक तथा सुरक्षित रक्त चढ़ाने की सुविधाएं भी होनी चाहिए। इसके लिए आवश्यकता है प्रशिक्षित व

हुनरमंद स्वास्थ्य कर्मियों की जो जेंडर संवेदनशील हों तथा संभावित जटिलताओं की रोकथाम करने व उनसे निपटने में सक्षम हों।

गर्भावस्था के दौरान होने वाली जटिलताओं के तहत, रक्तचाप बढ़ना व गर्भ में विषाक्तता हो सकती है जिसके लिए रक्तचाप घटाने की औषधियां चाहिए। संक्रमण के मामलों में ऐन्टी बायोटिक दवाइयां दी जानी चाहिए जिनका इस्तेमाल उचित मात्रा में उचित समय के लिए किया जाना अहम है।

यदि बाधित प्रसव पीड़ा है तो ऑप्रेशन द्वारा प्रसव कराना होगा जिसके लिए पीड़ाहर औषधियों तथा प्रशिक्षित डॉक्टर की उपस्थिति ज़रूरी है। नवजात शिशुओं की ऊंची मृत्युदर के चलते उनकी देखभाल भी उतनी ही आवश्यक है जितनी माताओं की ख़ासतौर पर यदि नवजात शिशु एक बालिका है।

यौन व प्रजनन स्वास्थ्य समस्याओं से निपटने के लिए अत्यावश्यक औषधियों की एक लम्बी सूची है जिसमें आपात गर्भ निरोधक सहित (जिन्हें बलात्कार के परिणाम स्वरूप गर्भवती हुई स्त्रियों को उपलब्ध कराया जाना चाहिए) अन्य गर्भ निरोधकों से लेकर संक्रमणरोधी दवाइयां शामिल हैं जो यौन संक्रामक रोगों (एस.टी.डी.) व प्रजनन मार्ग संक्रमणों (आर.टी.आई.) तथा मूत्रमार्ग संक्रमणों (यू.टी.आई.) से निपटने के लिए आवश्यक हैं।

अन्य प्रकार के कैंसरों के साथ-साथ स्त्रियों में सबसे आम स्तन व बच्चेदानी के मुंह के कैंसर की दवाइयों और रोग की देखभाल तक उनकी पहुंच अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अधिकांश के लिए ये दोनों चीज़ें उनकी जेब से बाहर हैं।

स्त्रियों को मलेरिया, टीबी, टायफॉइड, दस्त, पीलिया जैसे अन्य संक्रामक रोग भी होते हैं। अब बढ़ती संख्या में वे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, दमा, कई प्रकार की फेफड़ों की बीमारियों (रसोई के धुएं और अच्छे ईंधन के अभाव में) की भी शिकार हो रही हैं।

मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं, बाहरी कारणों से होने वाला अवसाद जिसके पीछे दहेज की मांग, बेटे की मांग और उसके लिए ज़बरदस्ती गर्भपात घरेलू हिंसा, काम की जगह पर यौन उत्पीड़न, अपने आस-पास के लोगों चाहे वे परिवार जन हों या सहकर्मी अथवा चिकित्सा सेवा प्रदाता, की पितृसत्तात्मक सोच जैसे कई कारण हो सकते हैं। औरतें मानसिक तनाव, चिन्ता, उदासी भोगती हैं जिनके कारण अनेक जटिल रूपों में मनोदैहिक गड़बड़ियां पैदा हो जाती हैं।

औरतों की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक स्वास्थ्य समस्याओं से निपटने के लिए उनकी स्वास्थ्य आवश्यकताओं को ऊंची प्राथमिकता देने की ज़रूरत है। केन्द्रीय स्वास्थ्य बजट जो सकल घरेलू उत्पाद का 1.2% है, को बढ़ाना उस दिशा में एक क़दम हो सकता है। अत्याधिक निजी स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था के चलते 70-80% कीमत अपनी जेब से देनी पड़ती है जिसके फलस्वरूप भारी भुगतान और भयंकर कर्ज़दारी पैदा होती है। इसे बदलना होगा। इसके लिए अत्यावश्यक प्राणरक्षक औषधियों को निशुल्क मुहैया कराने के कार्यक्रम की ज़रूरत है। *विश्व स्वास्थ्य संगठन* द्वारा तैयार अत्यावश्यक औषधि सूची जो सत्तर और अस्सी के दशक से उपलब्ध है और समय-समय पर संशोधित की जाती है, के सिद्धान्तों का पालन होना चाहिए। उत्यावश्यक औषधियों की राष्ट्रीय सूची 2011 अब 2015 में संशोधित की जाएगी।

दवाइयों का इस्तेमाल सोच-समझकर किया जाना चाहिए जिसके लिए मानक चिकित्सा दिशानिर्देश मौजूद हैं जिनका पालन किया जाना चाहिए। अध्ययन बताते हैं कि हमारे बाज़ार न सिर्फ़ असंगत, अनावश्यक और कुछ संभावित रूप से ख़तरनाक दवाइयों से भरे पड़े हैं बल्कि अनेक बार जब अत्यावश्यक दवाइयां उपलब्ध होती हैं तो व्यर्थ में उनका इस्तेमाल किया जाता है।

इनमें अनेक दवाइयों के गंभीर हानिकारक प्रभाव हो सकते हैं। कुछ दवाइयां विरूपी प्रभाव डालने वाली होती हैं जैसे अजन्में शिशुओं में जन्मजात रोग और कमियां पैदा करना। कुछ औषधियां स्तनपान कराने वाली स्त्रियों को नहीं दी जानी चाहिए। औषधियों के विवेकपूर्ण इस्तेमाल के तहत ये सभी सरोकार शामिल हैं।

एक और गंभीर जन स्वास्थ्य का मुद्दा जो सामने आया है वह है सूक्ष्म जीवाणुओं में ऐन्टी बायोटिक औषधियों की प्रतिरोधक शक्ति पैदा होना जिसके पीछे अनेक कारण हैं। सही औषधियों तक पहुंच की कमी, ख़र्च करने की

अक्षमता, ऐन्टी बायोटिक दवाइयों का बे-सोचे-समझे इस्तेमाल, इलाज की अवधि पूरी होने से पहले दवाइयां लेना बंद कर देना, मांस के रूप में उपभोग किए जाने वाले पशुओं में ऐन्टी बायोटिक का प्रयोग जो न सिर्फ़ इलाज के लिए किया जाता है बल्कि उनकी शीघ्र बढ़त के लिए होता है।

तपेदिक के मानक चिकित्सा दिशानिर्देश, राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम में आज भी मौजूद हैं लेकिन ऐन्टी बायोटिक प्रतिरोधकता के अध्ययन में पाया गया कि 90% से अधिक आदेशों का पालन नहीं किया जाता और उसके परिणाम अत्यन्त गंभीर हैं। यह बहुत अधिक चिन्ता का विषय है।

जहां तक तपेदिक और एच.आइ.वी. का संबंध है, घर में उसकी देखरेख पर बीमारी से जुड़े लांछन, भेदभाव तथा जेंडर पूर्वाग्रह का प्रभाव पड़ता है जिसके बारे में स्वास्थ्य देखरेख सुविधाओं को काम करना चाहिए।

एक व्यापक स्वास्थ्य नीति से मेल खाती हुई विवेकपूर्ण औषधि नीति की आवश्यकता है। निजी व्यावसायिक, औद्योगिक चिकित्सा क्षेत्र को नियमित करने की सभी कोशिशें अधिक सफल नहीं हुई हैं। *चिकित्सा संस्था क़ानून, 2010* अब तक लागू नहीं हुआ है तथा निहित स्वार्थों द्वारा उसे रोकने की कड़ी कोशिश की जा रही है। यह क़ानून, स्वास्थ्य संस्थाओं, प्रसव गृहों, अनुर्वरता केंद्रों, हृदय चिकित्सालयों आदि को श्रेणीबद्ध करने और उनके लिए नियम और मानक बनाने की कोशिश है। चिकित्सा संस्थाओं के नियमन की भी अत्यधिक आवश्यकता है, विशेष रूप से बड़े व्यावसायिक अस्पताओं के लिए ताकि

इलाज के नाम पर हो रहा शोषण रोका जा सके तथा सस्ती गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराई जा सके। यह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना एक चरण संकट केंद्र (वन स्टेप क्राइसिस सेंटर) की स्थापना जहां औरतों को डॉक्टरी, क़ानूनी, मनौवैज्ञानिक तथा संवेदनशील जांच से लेकर आपात गर्भ निरोधक जैसी सहयोगी सेवाएं एक ही स्थान पर मिल सकें।

औषधियों तक पहुंच का स्वास्थ्य तथा व्यवसायिक के अलावा एक जेंडर आयाम भी है। पिछली राष्ट्रीय औषध नीति 1994 में बनी थी उसके बाद से काई नई नीति नहीं बनी है। *राष्ट्रीय औषध मूल्य नीति 2011* ने औषधियों के कीमत निर्धारण का आधार,लागत आधारित मूल्य (सीबीपी) से बदलकर बाज़ार आधारित मूल्य (एमबीपी) कर दिया है जिसे जन स्वास्थ्य व जनहित के लिए काम करने वाली संस्थाओं ने चुनौती दी है। औषध बाज़ार अत्यन्त विकृत बाज़ार है जहां डॉक्टर नुस्ख़ा लिखते हैं और रोगी खरीदते हैं जबकि अन्य वस्तुओं के लिए ख़रीदार ख़ुद वस्तु का चुनाव करते हैं। यदि दवाई लिखने का आधार उत्तम चिकिस्ता व्यवहार के सिद्धांतों के अनुरूप विवेकपूर्ण और नीतिसंगत हो तो कोई समस्या नहीं है लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा है नहीं।

गंभीर समस्याएं तब पैदा होती है जब दवाइयां बनाने वाली कम्पनियों और नुस्ख़ा लिखने वाले डॉक्टरों के बीच गठजोड़ के चलते मंहगी दवाइयां लिखी जाती हैं जबकि उतने ही प्रभावी सस्ते विकल्प मौजूद हैं। यह समझना आवश्यक है कि इलाज का 70% ख़र्च दवाइयां के कारण है। मंहगी दवाई का मतलब है कर्ज़ का बोझ अथवा दवा न मिलने से उचित इलाज़ न होना। इन हालात में जेंडर पूर्वाग्रहों के चलते महिलाएं सर्वाधिक कष्ट उठाती हैं।

भूमंडलीय और राष्ट्रीय स्तर पर औषध नीतियों व नियमन पर बड़ी व ताक़तवर औषध कम्पनियों का असर बढ़ रहा है। वे डॉक्टरों के सम्मेलनों, शिक्षावृत्तियों और शैक्षणिक दौरों का ख़र्च उठाती हैं। चक्रद्वार नीतियां, हितों का टकराव, सार्वजनिक-निजी साझेदारी तथा उद्योगों की सामाजिक ज़िम्मेदारी, 'उपभोक्ताओं', 'रोगियों' और 'महिलाओं' के नाम पर उद्योगों और संस्थाओं को मोहरा

बना कर अपने एजेन्डे को आगे बढ़ाना भी रणनीति का एक हिस्सा है। घटती लोकतांत्रिक जगहों के चलते स्वास्थ्य, स्वास्थ्य देखरेख तथा अत्यावश्यक औषध के अधिकार के लिए संघर्ष करना और कठिन होता जा रहा है।

यह अत्यावश्यक है कि पश्चिमी देशों की विशेष रूप से अमरीका की बड़ी औषध कम्पनियों और उनकी सरकारों द्वारा अपनी कम्पनियों की सहूलियत के लिए भारत के *पेटेन्ट क़ानून 2005* को बदलने के लिए पड़ रहे दबाव को चुनौती देने वाली आवाज़ों को मज़बूत करें।

अमरीका द्वारा अपने आंतरिक क़ानून, *यूएस ट्रेड ओमनीबस ऐक्ट* के तहत भारत का नाम अपनी निगरानी सूची में प्राथमिकता पर रख कर तथा जिन देशों के पेटेन्ट क़ानून उनकी बड़ी कम्पनियों व उनके व्यापार के अनुकूल नहीं हैं उन्हें व्यापार पर रोक लगाने का डर दिखा कर धमकाया जाता है।

आज जब अमरीका तथा अन्य विकसित देश व भारत बहुपक्षीय *विश्व व्यापार संगठनों* के सदस्य हैं तब भारत व उसके जैसे विकासशील देशों पर एकपक्षीय और द्विपक्षीय व्यापार समझौते थोप कर भारत की बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार प्रणाली को बदलने का दबाव डालना अत्यन्त अनुचित, अनैतिक और अन्यायपूर्ण है जबकि उसे पहले ही बदल कर 'ट्रिप्स' (व्यापार संबंधी बौद्धिक अधिकार) अनुकूल बनाया जा चुका है। बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार (आईपीआर) का संबंध स्वामित्व शुल्क, एकाधिकार नियंत्रण तथा 'ट्रिप्स' के तहत उपलब्ध लचीलेपन का फ़ायदा न उठाने देने से है जिसके अन्तर्गत भारत तथा अन्य विकासशील देशों में सस्ती, अच्छी जेनेरिक दवाइयां बनाई जा सकती हैं।

इसी धौंस के चलते 39 बड़े औषध संघों ने प्रजाति पार्थक्य समाप्ति के बाद की दक्षिण अफ्रीका की नई सरकार के ख़िलाफ़ मुकदमा दायर किया जिसने 'ट्रिप्स' के लचीलेपन का लाभ लेते हुए अपने नागरिकों के लिए सस्ती अधोविषाणु विरोधी दवाइयां बनाने की कोशिश की। हालांकि सारे विश्व में एचआईवी/एड्स स्वास्थ्य ऐक्टिविस्टों के विरोध के कारण औषध संघों का अपना मुक़दमा वापस लेने को मजबूर होना पड़ा, जिनका दावा था कि उनके बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार का हनन हुआ है। जेनेरिक रूप में उपलब्ध अधोविषाणु विरोधी दवाई के आते ही बड़ी कम्पनियों की उसी दवाई की कीमतें दस हज़ार डॉलर से गिरकर दो सौ पचास डॉलर पर आ गईं। बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार का एक छत्र राज, जन स्वास्थ्य और जनहित के ख़िलाफ़ है।

ट्रिप्स तथा जनस्वास्थ्य संबंधी दोहरा घोषणा पत्र 2001, बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार का अन्तर्राष्ट्रीय आयोग, इनोवेशन एण्ड हैल्थ 2006, सभी ने जन स्वास्थ्य की सुरक्षा का रास्ता अपनाया है। दुर्भाग्य से कम्पनी संघ भी 'ट्रिप्स' की मांग करते हैं परंतु साथ ही उनका अपना एजेन्डा भी शामिल किया जाता है।

भारत के पुराने *पेटेन्ट क़ानून 1971* (जिसमें प्रक्रिया का पेटेन्ट था उत्पाद का नहीं) के चलते तथा जिसमें पेटेन्ट सुरक्षा भी सिर्फ़ 5-7 वर्ष की थी आज की तरह 20 वर्ष की नहीं थी, भारत में जेनेरिक औषधि उद्योग खूब फला-फूला और 'विश्व का दवाखाना' कहलाने लगा क्योंकि वह अपने देश में व अन्य देशों में सस्ती, अच्छी अत्यावश्यक औषधियां मुहैया करा रहा था। बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के मुद्दे का अनेक क्षेत्रों के लिए बहुत गंभीर निहित अर्थ हो सकता है जैसे औषधियां, रोगों के टीके, रोग निदान, चिकित्सा साधन, पारम्परिक ज्ञान,

पारम्परिक औषधियां,कृषि क्षेत्र में बीज तथा और बहुत कुछ इससे प्रभावित हो सकते हैं।

बड़ी कम्पनियों का रचा हुआ, *निवेशक सरकार विवाद निपटारा (आई.सी.डी.एस.)* को व्यापार समझौतों का हिस्सा बनाने तथा बौद्धिक सम्पत्ति को निवेश के रूप में शामिल करने का एक बड़ा ख़तरा मंडरा रहा है, जिसका विकासशील देशों और उनके लोगों विशेषतः बहुसंख्यक ग़रीबों व औरतों के लिए गंभीर अर्थ हो सकता है अतः इसे चुनौती देकर अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए। आज जब जनस्वास्थ्य, कृषि संबंधी तथा जलवायु संकट बढ़ते जा रहे हैं, औरतों के स्वास्थ्य के मुद्दे को व्यापक नज़रिए से देखना और काम करना होगा जिसके अन्तर्गत स्वास्थ्य नीतियों, औषध नीतियों तथा आर्थिक व्यापार नीतियों में जेंडर आयाम शामिल करना होगा। औरतों के स्वास्थ्य सरोकार केवल गर्भाशय व नलिकाओं तक सीमित न रहें जिसके चलते उनके स्वास्थ्य के नाम पर सिर्फ़ वन्ध्यीकरण कैम्प लगाए जाते हैं जिनमें न तो मानक, आचार व दिशानिर्देशों का पालन होता है ना ही उन्हें गरिमा व आवश्यक देखरेख मिलती है।

स्वास्थ्य देखरेख में जेंडर न्याय तथा सर्वव्यापक देखरेख तक समानतापूर्ण पहुंच के लिए वचनबद्ध स्त्रियों के तौर पर हम वर्तमान परिस्थितियों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। हमें बेहतरी के लिए बदलाव चाहिए और उसके लिए कार्यरत रहेंगी।

मीरा शिवा *डॉक्टर, जन स्वास्थ्य आंदोलन की संस्थापक व हेल्थ एक्शन इंटरनेशनल एशिया पसिफ़िक की अध्यक्षा हैं।*

अनुवादः वीणा शिवपुरी